2026:AHC-LKO:17278-DB
प्रकाशनार्थ स्वीकृत
11.11.2025 को सुरक्षित
10.03.2026 को पारित

Translated Version. Not for Legal Use

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

लखनऊ

रिट - ए संख्या- 9798 वर्ष 2023

उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अपर मुख्य सचिव, कर एवं पंजीकरण विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ एवं एक अन्य .....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

अंशुल जगन्नाथ .....प्रत्यर्थी(गण)

अपीलकर्ता(गण) के अधिवक्ता : मुख्य स्थायी अधिवक्ता

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : अंशुमान सिंह, अजय शंकर तिवारी, ईशान तिवारी

न्यायालय संख्या-25

माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती संगीता चंद्रा

माननीय न्यायमूर्ति अमिताभ कुमार राय

(द्वारा : माननीय न्यायमूर्ति अमिताभ कुमार राय)

1. राज्य-याचिकाकर्ताओं की ओर से पेश विद्वान अपर महाधिवक्ता श्री एस.एम योंकवार जिनकी सहायता विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री अनिरुद्ध सिंह ने किया और प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री अजय शंकर तिवारी को सुना गया।

2. यह रिट याचिका राज्य लोक सेवा न्यायाधिकरण, लखनऊ द्वारा दावा याचिका संख्या 1708/2022 "अंशुल जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य" में दिनांकित 18.04.2023 को पारित निर्णय और आदेश को रद्द करने की राहत पाने के लिए दायर की गई है।

3. वर्तमान प्रकरण के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि विभाग की विशेष अन्वेषण शाखा (एसआईबी) इकाई द्वारा उस अवधि के संबंध में जांच की गई, जब एकमात्र प्रत्यर्थी अंशुल जगन्नाथ, उन्नाव

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

में वाणिज्यिक कर विभाग के सहायक आयुक्त (सचल दस्ता) के पद पर पदस्थ थे। जांच के दौरान एसआईबी इकाई ने पाया कि दिनांकित 02.03.2021 को मैसर्स जगदम्बा मेटालाइज, उन्नाव में बिना किसी दस्तावेज के लौह स्क्रैप से लदे 22 वाहन उपस्थित थे, किंतु प्रत्यर्थी द्वारा इस संबंध में कोई कार्रवाई नहीं की गई। अतः उन्हें अपने कर्तव्यों के निर्वहन में प्रथमदृष्टया लापरवाही एवं शिथिलता का दोषी पाया गया।

(4) प्रत्यर्थी को दिनांकित 27.04.2021 के आदेश द्वारा निलंबित कर दिया गया तथा उनके विरुद्ध उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन एवं अपील) नियमावली, 1999 (जिसे आगे "नियमावली, 1999" कहा गया है) के अंतर्गत अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ की गई। अपर आयुक्त ग्रेड-I, वाणिज्यिक कर, लखनऊ को जांच अधिकारी नियुक्त किया गया।

(5) प्रत्यर्थी के विरुद्ध दिनांकित 29.06.2021 को आरोप-पत्र जारी किया गया, जिसमें तीन आरोप लगाए गए, जो निम्नलिखित हैं :

(i) **आरोप संख्या 1 -** उपर्युक्त फर्म के कारखाने के बाहर लौह स्क्रैप के कच्चे माल से लदे 22 वाहन खड़े पाए गए तथा ₹50,000/- से अधिक मूल्य का माल बिना ई-वे बिल के पाया गया, जो उत्तर प्रदेश.जी.एस.टी. नियमावली, 2017 के नियम 138बी का उल्लंघन था। तथापि, दिनांकित 07.09.2020 से 02.03.2021 तके, अर्थात निरीक्षण की तिथि तक, उन्नाव सचल दस्ता में प्रत्यर्थी की पदस्थापना के दौरान, प्रत्यर्थी द्वारा आवक अथवा जावक आपूर्ति से संबंधित ऐसे किसी वाहन के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गई, जिससे उनकी ओर से मिलीभगत का संकेत मिलता है। अतः एकमात्र प्रत्यर्थी को अपने उत्तरदायित्वों एवं कर्तव्यों का पूर्ण सत्यनिष्ठा एवं कर्तव्यनिष्ठा के साथ निर्वहन न करने के कारण उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक आचरण नियमावली, 1956 के नियम 3 के उल्लंघन का दोषी पाया गया।

(ii) **आरोप संख्या 2-** दिनांकित 10.03.2021 को एकमात्र प्रत्यर्थी ने निरीक्षण हेतु एक यात्री बस को रोका और पाया कि उसमें कुछ माल अवैध रूप से परिवहन किया जा रहा था। तथापि, उन्होंने कोई कार्रवाई नहीं की। प्रत्यर्थी ने मोबाइल फोन पर बस के स्वामी से बातचीत की और कथित रूप से उसे अवैध लाभ प्रदान करने के लिए सौदेबाजी की। एकमात्र प्रत्यर्थी एवं बस स्वामी के मध्य हुई बातचीत की ऑडियो क्लिप समाचार चैनल "नव भारत टाइम्स" पर प्रसारित हुई। अतः एकमात्र प्रत्यर्थी को उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक आचरण नियमावली, 1956 के नियम 3 के उल्लंघन का दोषी पाया गया।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(iii) **आरोप संख्या 3-** उपर्युक्त यात्री वाहन को रोकने के पश्चात एकमात्र प्रत्यर्थी ने विभागीय सर्वर को दो घंटे के विलंब से एसएमएस भेजा और सर्वर से इंटरसेप्शन संख्या 554963 प्राप्त हुई। इसके अतिरिक्त, वाहन पर लदे माल के सत्यापन हेतु प्रपत्र जीएसटी एमओवी-02 में आदेश सात घंटे के विलंब से जारी किया गया। इस प्रकार, एकमात्र प्रत्यर्थी ने दिनांकित 09.05.2018 के परिपत्र संख्या 1819010 का उल्लंघन किया, क्योंकि उन्होंने उसमें निहित निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित नहीं किया। यह अनुशासनहीनता एवं शासकीय निर्देशों के प्रति उपेक्षापूर्ण रवैये को दर्शाता है।

(6) एकमात्र प्रत्यर्थी ने दिनांकित 19.07.2021 के पत्र द्वारा आरोप-पत्र का अपना प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया। तत्पश्चात जांच अधिकारी ने जांच कार्यवाही आगे बढ़ाई और व्यक्तिगत सुनवाई हेतु दिनांकित 02.08.2021 नियत की। उक्त तिथि को प्रत्यर्थी ने आरोप संख्या 3 के संबंध में एक अतिरिक्त प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया और आरोपों से इनकार किया। जांच अधिकारी ने दिनांकित 28.09.2021 के पत्र द्वारा अपनी जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें निष्कर्ष निकाला गया कि आरोप संख्या 1 आंशिक रूप से सिद्ध हुआ तथा आरोप संख्या 2 एवं 3 प्रत्यर्थी के विरुद्ध पूर्णतः सिद्ध हुए। इसके पश्चात नियमावली, 1999 के नियम 9(4) के अंतर्गत दिनांकित 29.10.2021 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया। एकमात्र प्रत्यर्थी ने दिनांकित 18.11.2021 को उक्त कारण बताओ नोटिस का अपना प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया तथा दिनांकित 06.12.2021 को अपने निलंबन को निरस्त करने हेतु अभ्यावेदन भी प्रस्तुत किया, क्योंकि वे दिनांकित 27.04.2021 से निलंबित थे।

7. प्रत्यर्थी ने निलंबन आदेश तथा अनुशासनात्मक कार्यवाही को चुनौती देते हुए रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021, “अंशुल जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य”, भी दायर की। उक्त रिट याचिका का निस्तारण दिनांकित 29.09.2021 के निर्णय एवं आदेश द्वारा किया गया, जिसमें सक्षम प्राधिकारी को अनुशासनात्मक कार्यवाही आगे बढ़ाने तथा उसे दो माह की अवधि के भीतर पूर्ण करने का निर्देश दिया गया। साथ ही यह निर्देश दिया गया कि ऐसा न किए जाने की स्थिति में याचिकाकर्ता (वर्तमान प्रत्यर्थी) का निलंबन आदेश निरस्त/समाप्त माना जाएगा और उन्हें सेवा में पुनःस्थापित किया जाएगा।

8. अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्षों तथा कारण बताओ नोटिस के प्रत्युत्तर पर विचार करने के पश्चात स्थायी प्रभाव से चार वेतनवृद्धियां रोकने तथा साथ में

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

परिनिन्दा प्रविष्टि किए जाने का दंड देने का प्रारंभिक निर्णय लिया। प्रस्तावित दंड के संबंध में उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग से दिनांकित 07.02.2022 के पत्र द्वारा सहमति मांगी गई और आयोग ने दिनांकित 02.05.2022 के पत्र द्वारा अपनी सहमति प्रदान की। अंततः अनुशासनिक प्राधिकारी ने दिनांकित 30.05.2022 को दंडादेश पारित करते हुए प्रत्यर्थी पर परिनिन्दा प्रविष्टि तथा स्थायी रूप से चार वेतनवृद्धियां रोकने का दंड अधिरोपित किया और साथ ही प्रत्यर्थी का निलंबन निरस्त कर दिया।

9. इससे क्षुब्ध होकर एकमात्र प्रत्यर्थी ने दावा याचिका संख्या 1708 सन् 2022, “अंशुल जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य”, दायर की, जिसे राज्य लोक सेवा न्यायाधिकरण, लखनऊ ने दिनांकित 18.04.2023 के निर्णय एवं आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया। उक्त आदेश को वर्तमान रिट याचिका में चुनौती दी गई है।

10. राज्य-याचिकाकर्तागण की ओर से उपस्थित विद्वान अपर महाधिवक्ता श्री एस. एम. रायकवार ने प्रस्तुत किया कि न्यायाधिकरण द्वारा दिनांकित 18.04.2023 को पारित निर्णय एवं आदेश विधि-विरुद्ध एवं विकृत है, क्योंकि न्यायाधिकरण द्वारा इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य, 2013 एससीसी आनलाईन एआईआई 16288** में दिए गए निर्णय पर किया गया भरोसा गलत है। यह तर्क दिया गया कि रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021 में दिनांकित 29.09.2021 के आदेश द्वारा रिट न्यायालय का निर्देश केवल इस सीमा तक था कि यदि अनुशासनात्मक कार्यवाही दो माह के भीतर पूर्ण नहीं होती है, तो ऐसी स्थिति में निलंबन आदेश निरस्त/समाप्त हो जाएगा; किंतु इससे अनुशासनात्मक कार्यवाही को आगे जारी रखने पर कोई रोक नहीं लगती।

11. भारत के माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **भारत संघ एवं अन्य बनाम शरवन कुमार, 2022 एससीसी आनलाईन एससी 2032** में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया गया। विद्वान अपर महाधिवक्ता का विशिष्ट तर्क था कि यदि अनुशासनात्मक कार्यवाही निर्धारित अवधि के भीतर पूर्ण नहीं हो सकी, तो भी रिट न्यायालय द्वारा उसके आगे जारी रहने पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया था। दिनांकित 29.09.2021 के आदेश द्वारा न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण न किए जाने का एकमात्र परिणाम यह था कि निलंबन आदेश निरस्त/समाप्त हो जाएगा; अनुशासनात्मक कार्यवाही को जारी रखने पर कोई रोक नहीं थी।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

12. विद्वान अपर महाधिवक्ता श्री एस. एम. रायकवार ने आगे तर्क दिया कि विभागीय जांच में कोई प्रक्रियात्मक त्रुटि नहीं थी। प्रत्यर्थी को व्यक्तिगत सुनवाई हेतु तिथि एवं समय निर्धारित करके पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया था और जांच अधिकारी ने समुचित विचार के पश्चात आरोप संख्या 1 को आंशिक रूप से सिद्ध तथा आरोप संख्या 2 एवं 3 को पूर्णतः सिद्ध पाया। यह तर्क दिया गया कि यदि यह मान भी लिया जाए कि कोई प्रक्रियात्मक त्रुटि हुई थी, तब भी न्यायाधिकरण को माननीय उच्चतम न्यायालय **द्वारा चेयरमैन, भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य बनाम ए. मसिलामणि, (2013) 6 एससीसी 530** में प्रतिपादित स्थापित विधि के आलोक में, जिस चरण पर त्रुटि हुई थी, उसी चरण से नई जांच कराए जाने हेतु प्रकरण को अनुशासनिक प्राधिकारी को वापस भेजना चाहिए था। इस संबंध में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय **उत्तर प्रदेश राज्य, प्रमुख सचिव, कर एवं निबंधन विभाग के माध्यम से बनाम राकेश जैन एवं अन्य, 2023 एससीसी आनलाईन एआईआई 933** पर भी भरोसा किया गया।

13. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अजय शंकर तिवारी ने तर्क दिया कि जब रिट न्यायालय ने रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021 में दिनांकित 29.09.2021 के निर्णय एवं आदेश द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही को दो माह के भीतर पूर्ण करने की समय-सीमा निर्धारित कर दी थी, तो ऐसी स्थिति में अनुशासनात्मक कार्यवाही का उक्त अवधि के भीतर पूर्ण किया जाना अनिवार्य था और यदि कार्यवाही पूर्ण नहीं हो सकी, तो समय-विस्तार की अनुमति न्यायालय से मांगी जानी चाहिए थी। यह निर्विवाद है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर पूर्ण नहीं की गई और समय-विस्तार हेतु कोई आवेदन भी प्रस्तुत नहीं किया गया। अतः **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त)** में पूर्ण पीठ के निर्णय, जिसे माननीय उच्चतम न्यायालय ने **उत्तर प्रदेश राज्य, प्रमुख सचिव, पंचायती राज विभाग, लखनऊ के माध्यम से बनाम राम प्रकाश सिंह, 2025 एससीसी आनलाईन एससी 891** में अनुमोदित किया है, विशेषतः उक्त निर्णय के पैरा 61 से 64 के आलोक में, अनुशासनात्मक कार्यवाही दूषित हो गई।

14. पक्षकारों को सुनने के पश्चात विचारणीय प्रश्न निम्नलिखित हैं :

(i) क्या वर्तमान प्रकरण के तथ्यों एवं परिस्थितियों में विभागीय जांच दूषित हो गई, क्योंकि अनुशासनात्मक कार्यवाही रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021 में दिनांकित 29.09.2021 को पारित निर्णय एवं आदेश द्वारा न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर पूर्ण नहीं की गई, और क्या इस संबंध में **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त)** में पूर्ण पीठ द्वारा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

प्रतिपादित तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **राम प्रकाश सिंह (उपर्युक्त)** में अनुमोदित विधि लागू होगी?

(ii) यदि प्रथम प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है, अर्थात यदि यह माना जाए कि अनुशासनात्मक कार्यवाही न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के पश्चात भी विधिसम्मत रूप से जारी रह सकती थी, तो क्या न्यायाधिकरण द्वारा जांच में प्रक्रियात्मक त्रुटियां पाए जाने के पश्चात, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **चेयरमैन, एलआईसी ऑफ इंडिया (उपर्युक्त) तथा मैनेजिंग डायरेक्टर, ईसीआईएल, हैदराबाद एवं अन्य बनाम बी. करुणाकर एवं अन्य, (1993) 4 एससीसी 727** में प्रतिपादित विधि के आलोक में, प्रकरण को त्रुटि उत्पन्न होने वाले चरण से नई जांच किए जाने हेतु अनुशासनिक प्राधिकारी को वापस भेजा जाना चाहिए था?

15. प्रथम प्रश्न के संबंध में रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021 में दिनांकित 29.09.2021 को पारित निर्णय एवं आदेश पर विचार करना उचित होगा, जिसमें प्रत्यर्थी ने दिनांकित 27.04.2021 के निलंबन आदेश के साथ-साथ अनुशासनात्मक कार्यवाही को भी चुनौती दी थी। रिट न्यायालय ने तर्कों पर विचार करने के पश्चात निलंबन आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए इसे उपयुक्त प्रकरण नहीं पाया। तथापि, न्यायालय ने निर्देश दिया कि अनुशासनात्मक कार्यवाही दो माह के भीतर पूर्ण की जाए, अन्यथा निलंबन आदेश निरस्त/समाप्त हो जाएगा। अतः न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण न किए जाने का परिणाम केवल इतना था कि निलंबन आदेश निरस्त/समाप्त हो जाएगा। इसका किसी भी प्रकार के निर्वचन द्वारा यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा की समाप्ति के पश्चात अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी नहीं रह सकती थी।

रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021, "अंशुल जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य", में दिनांकित 29.09.2021 को पारित आदेश को सुविधा हेतु निम्नवत् उद्धृत किया जाता है :

"याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता को सुना गया।

दिनांकित 27.04.2021 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को निलंबित किया गया है। दिनांक 29.06.2021 को याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र भी जारी किया गया था और उसके प्रत्युत्तर में वह अपना जवाब पहले ही प्रस्तुत कर चुका है। आरोप-पत्र का प्रत्युत्तर प्रस्तुत करने के पश्चात ही

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

याचिकाकर्ता निलंबन आदेश तथा अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ किए जाने के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष आया है।

अनुशासनात्मक कार्यवाही की वैधता पर विचार करना मात्र एक शैक्षिक अभ्यास होगा; अतः न्यायालय उसके गुण-दोष में प्रवेश करने से विरत रहता है। जहां तक याचिकाकर्ता के विरुद्ध पारित निलंबन आदेश का संबंध है, यह प्रस्तुत किया गया है कि पांच माह से अधिक समय व्यतीत हो चुका है, किंतु दिनांक 29.06.2021 को आरोप-पत्र जारी किए जाने के बावजूद अनुशासनात्मक कार्यवाही अभी तक पूर्ण नहीं हुई है।

संक्षेप में प्रस्तुत तर्क यह है कि याचिकाकर्ता का निरंतर निलंबन शक्ति का मनमाना प्रयोग है। इसके अतिरिक्त, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन एवं अपील) नियमावली, 1999 के नियम 4 की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित करते हुए तर्क दिया है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोप ऐसे नहीं हैं जिनके कारण कोई प्रमुख दंड अधिरोपित किया जा सके। आरोप-पत्र में वर्णित कर्तव्य-च्युतता केवल अधिकारी की कार्यक्षमता के संबंध में टिप्पणी किए जाने योग्य है और सेवा विधिशास्त्र में इसे कदाचार की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता।

लगभग पांच माह से निलंबन आदेश के प्रभावी रहने तथा अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण न किए जाने को ध्यान में रखते हुए यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क में बल है।

यह न्यायालय अत्यधिक सावधानी के दृष्टिकोण से सक्षम प्राधिकारी को निर्देश देता है कि वह लंबित जांच को आगे बढ़ाए और आज से दो माह की अवधि के भीतर उसे पूर्ण करे। यदि सक्षम प्राधिकारी उक्त अवधि के भीतर जांच पूर्ण करने में विफल रहता है, तो निलंबन आदेश निरस्त/समाप्त माना जाएगा और याचिकाकर्ता को सेवा में पुनःस्थापित किया जाएगा तथा उसे नियमित वेतन का भुगतान किया जाएगा। निलंबन अवधि के दौरान वेतन के अंतर के संबंध में निर्णय प्रकरण में प्रस्तुत जांच रिपोर्ट पर निर्णय लेते समय लिया जाएगा।

याचिकाकर्ता ने जांच में सहयोग करने का आश्वासन दिया है।"

16. रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021 में दिनांकित 29.09.2021 को पारित निर्णय एवं आदेश के मात्र अवलोकन से स्पष्ट होता है कि न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में रखा था कि याचिकाकर्ता (वर्तमान प्रत्यर्थी) लगभग पांच माह से निलंबित था और अनुशासनात्मक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

कार्यवाही अभी तक पूर्ण नहीं हुई थी। इस पर विचार करने के पश्चात न्यायालय ने निर्देश दिया कि अनुशासनात्मक कार्यवाही दो माह की अवधि के भीतर पूर्ण की जाए, अन्यथा निलंबन निरस्त/समाप्त कर दिया जाए। दिनांकित 29.09.2021 के निर्णय एवं आदेश द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण करने के लिए न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा केवल याचिकाकर्ता (वर्तमान प्रत्यर्थी) के निलंबन तक सीमित थी और इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि दो माह की अवधि समाप्त होने के पश्चात याचिकाकर्ता (वर्तमान प्रत्यर्थी) के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी ही नहीं रह सकती थी। अतः **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त)** में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय पर निर्भर करते हुए राज्य-याचिकाकर्तागण की ओर से प्रस्तुत तर्क गलत है और अस्वीकार किए जाने योग्य है।

17. इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त**) में दिए गए निर्णय में पैरा 19 में संदर्भित प्रश्नों का उत्तर दिया गया है, जिसे निम्नवत् उद्धृत किया जाता है :

"19. उपर्युक्त विवेचना के आलोक में अब हम पूर्ण पीठ को संदर्भित प्रश्नों का उत्तर देने के लिए अग्रसर होते हैं।

(क) प्रश्न संख्या (क): हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि यदि जांच न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर पूर्ण नहीं होती है, तो नियोक्ता के लिए यह खुला है कि वह जांच पूर्ण करने में हुए विलंब के कारणों को स्पष्ट करते हुए न्यायालय के समक्ष उचित आवेदन प्रस्तुत कर समय-विस्तार की मांग करे। ऐसी स्थिति में समय-विस्तार किया जाना चाहिए अथवा नहीं, यह तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर न्यायालय द्वारा तय किया जाएगा। तथापि, जहां न्यायालय द्वारा समय-सीमा निर्धारित की गई हो, वहां नियोक्ता के लिए उस समय-सीमा की उपेक्षा करना संभव नहीं होगा और समय-विस्तार की मांग की जानी आवश्यक होगी।

(ख) प्रश्न संख्या (ख): उच्चतम न्यायालय द्वारा सुरेश चन्द्र (उपर्युक्त) में दिए गए निर्णय तथा इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा सत्येंद्र कुमार सहाय (उपर्युक्त) में दिए गए निर्णय से स्पष्ट है कि नियोक्ता द्वारा अनुशासनात्मक जांच पूर्ण करने में मात्र विलंब होने से प्रत्येक मामले में स्वतः संपूर्ण कार्यवाही शून्य नहीं हो जाती। जिस न्यायालय ने समय-सीमा निर्धारित की है, उसे समय-विस्तारित करने का अधिकार प्राप्त है और उस अधिकार का प्रयोग करते हुए न्यायालय यह विचार कर सकता है कि विलंब का संतोषजनक स्पष्टीकरण दिया गया है अथवा नहीं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

न्यायालय जांच पूर्ण करने हेतु समय को उपयुक्त रूप से बढ़ा सकता है, चाहे कर्मचारी द्वारा निर्धारित अवधि में जांच पूर्ण न होने के आधार पर जांच को चुनौती देते हुए कार्यवाही प्रारंभ की गई हो अथवा नियोक्ता द्वारा स्वतंत्र आवेदन प्रस्तुत किया गया हो। न्यायालय के पास समय-विस्तार प्रदान करने की अंतर्निहित क्षेत्राधिकार है, क्योंकि मूल समय-सीमा स्वयं न्यायालय द्वारा निर्धारित की गई थी। न्याय के हित में समय-विस्तार प्रदान करते समय जांच को शीघ्र पूर्ण करने की आवश्यकता तथा निष्पक्ष एवं ईमानदार प्रशासन के हितों के बीच संतुलन स्थापित किया जाना आवश्यक है। उपयुक्त मामले में न्यायालय स्वयं भी समय-विस्तार कर सकता है ताकि कदाचार के गंभीर आरोप को दंडित किए बिना समाप्त न होने दिया जाए और लोकहित को गंभीर क्षति से बचाया जा सके। न्यायालय को निर्धारित अवधि समाप्त होने से पूर्व अथवा उसके पश्चात भी समय-विस्तार प्रदान करने की पर्याप्त शक्ति प्राप्त है।"

(जोर हमारे द्वारा दिया गया है।)

18. इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त**) में प्रतिपादित विधि यह भी प्रावधानित करती है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण करने की समय-सीमा को बढ़ाने के लिए इस न्यायालय द्वारा स्वप्रेरणा से भी शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है, ताकि कदाचार के गंभीर आरोप को दंडित किए बिना समाप्त न होने दिया जाए। इसका तात्पर्य यह है कि उपयुक्त मामले में, जहां नियोक्ता ने अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण करने हेतु समय-विस्तार के लिए न्यायालय का रुख नहीं किया है, वहां न्यायालय, अनुशासनात्मक कार्यवाही में पारित आदेशों की वैधता पर विचार करते समय, उन कारणों पर भी विचार कर सकता है जिनके कारण कार्यवाही निर्धारित अवधि में पूर्ण नहीं हो सकी। तत्पश्चात न्यायालय लोकहित को गंभीर क्षति से बचाने तथा गंभीर कदाचार को दंडित किए बिना समाप्त होने से रोकने के लिए स्वप्रेरणा से समय-सीमा बढ़ाने की शक्ति का प्रयोग कर सकता है।

19. **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त)** में पूर्ण पीठ द्वारा प्रतिपादित विधि को न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण द्वारा प्रत्येक मामले में यांत्रिक रूप से लागू नहीं किया जा सकता कि केवल इस आधार पर दंडादेश के विरुद्ध याचिका स्वीकार कर ली जाए कि पूर्ववर्ती याचिका में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर अनुशासनात्मक कार्यवाही पूर्ण नहीं की गई। वास्तव में, न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण को ऐसे प्रश्नों पर विचार करते समय उन परिस्थितियों की भी जांच करनी होगी जिनके कारण अनुशासनात्मक कार्यवाही न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर पूर्ण नहीं हो सकी, साथ ही आरोपों की गंभीरता पर भी विचार करना होगा, ताकि यह

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

निर्धारित किया जा सके कि न्यायालय द्वारा स्वप्रेरणा से समय-सीमा बढ़ाने की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए अथवा नहीं।

20. तथापि, तथ्य यह है कि वर्तमान रिट याचिका में **अभिषेक प्रभाकर अवस्थी (उपर्युक्त**) में पूर्ण पीठ द्वारा प्रतिपादित विधि लागू नहीं होती, क्योंकि जैसा कि हम ऊपर अभिनिर्धारित कर चुके हैं, रिट याचिका संख्या 21920 (एसएस) वर्ष 2021 में दिनांकित 29.09.2021 को निर्णय एवं आदेश पारित करते समय इस न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा केवल निलंबन आदेश के जारी रहने के संदर्भ में थी, न कि न्यायालय द्वारा निर्धारित दो माह की अवधि समाप्त होने के पश्चात अनुशासनात्मक कार्यवाही को जारी रखने के संबंध में।

21. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **शरवन कुमार (उपर्युक्त**) में दिए गए निर्णय का भी उल्लेख करना उचित होगा, जिसमें पैरा 31 से 37 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है :

31. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस मामले में न्यायाधिकरण द्वारा दो माह की अवधि निर्धारित करने का उद्देश्य केवल शीघ्र कार्यवाही सुनिश्चित करना था, क्योंकि मामला वर्ष 2010 में पुनर्विचार हेतु वापस भेजा गया था, जबकि अनुशासनात्मक कार्यवाही दिनांकित 09.01.2005 की घटना से संबंधित थी। तथापि, उक्त दो माह की अवधि ने किसी वैधानिक अनिवार्यता के समान कोई दर्जा प्राप्त नहीं किया था, जिससे उसकी समाप्ति के साथ अनुशासनात्मक कार्यवाही स्वतः समाप्त हो जाती। यह स्थापित विधि है कि यदि कोई न्यायनिर्णायक प्राधिकारी अपनी क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए किसी कार्य को करने के लिए समय-सीमा निर्धारित कर सकता है, तो इसके विपरीत किसी विशिष्ट वैधानिक प्रावधान के अभाव में, उसी क्षेत्राधिकार में प्रारंभ में निर्धारित समय-सीमा को बढ़ाने की शक्ति भी अंतर्निहित होती है। ऐसे सशर्त आदेशों को इस न्यायालय द्वारा नियमित रूप से "इन टेररोरेम" के रूप में माना गया है, ताकि किसी वादी की विलंबकारी रणनीति पर रोक लगाई जा सके अथवा न्यायनिर्णायक प्राधिकारी की शिथिलता से बचा जा सके; किंतु न्यायालय इस आधार पर समय बढ़ाने की शक्ति से विहीन नहीं हो जाता कि उसने पूर्व चरण में समय-सीमा को अनिवार्य रूप से निर्धारित किया था। महंत राम दास बनाम गंगा दास, (1961) 3 एससीआर 763 के मामले में इस न्यायालय ने न्यायालय द्वारा निर्धारित न्यायालय शुल्क की कमी को जमा करने की अवधि से संबंधित अनिवार्य आदेश पर विचार किया था, जिसमें समय-विस्तार हेतु आवेदन निर्धारित अवधि समाप्त होने के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

पश्चात सुनवाई के लिए आया था और आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था। इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप से स्थिति स्पष्ट की थी :

"5... ऐसे आदेश मेद और फारसियों के कानून के समान नहीं होते। ऐसे मामले ज्ञात हैं जिनमें न्यायालयों ने ऐसी स्थिति से निपटने के लिए अपनी कार्यप्रणाली को अनुकूलित किया है और अंतिम आदेश पारित हो जाने के बावजूद भी वाद या कार्यवाही को पुनर्स्थापित किया है।"

32. हम इसे कुछ और स्पष्ट करते हैं। जब न्यायालय/न्यायाधिकरण द्वारा किसी विशेष कार्य को किसी निर्धारित अवधि के भीतर करने के लिए सशर्त आदेश पारित किया जाता है, किंतु आदेश में डिफॉल्ट/अनुपालन न किए जाने के परिणाम के संबंध में कुछ नहीं कहा जाता, तो समय निर्धारित करने वाला न्यायालय/न्यायाधिकरण स्पष्टतः उस समय को बढ़ाने की शक्ति अपने पास रखता है। इसके परिणामस्वरूप, अपीलीय न्यायालय/न्यायाधिकरण अथवा कोई उच्चतर मंच भी, आवश्यकता होने पर, ऐसे समय को बढ़ाने की शक्ति रखता है। किसी भी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता कि निर्धारित समय-सीमा समाप्त होते ही कार्यवाही समाप्त हो जाएगी।

(जोर हमारे द्वारा दिया गया है।)

33. वर्तमान मामले में भी समय-विस्तार के आवेदन को केवल इस तकनीकी आधार पर खारिज किया गया कि रेलवे बोर्ड के निर्देश न्यायाधिकरण के समक्ष प्रस्तुत नहीं किए गए थे; इससे मूल रूप से निर्धारित समय-सीमा को ऐसा अनिवार्य एवं कठोर स्वरूप प्राप्त नहीं हुआ था कि उसके समाप्त होते ही कार्यवाही समाप्त हो जाए।

34. उच्च न्यायालय ने कार्यवाही को समाप्त एवं शून्य मानते समय इस मूलभूत सिद्धांत की उपेक्षा की कि ऐसी समय-सीमा का निर्धारण केवल एक प्रक्रियात्मक विषय था, जिसका उद्देश्य कार्यवाही को शीघ्र पूर्ण करने की अपेक्षा रखना था। दो माह की उक्त अवधि ने ऐसा कोई अनिवार्य वैधानिक स्वरूप प्राप्त नहीं किया था कि उसकी समाप्ति के साथ संपूर्ण अनुशासनात्मक कार्यवाही शून्य हो जाए।

(जोर हमारे द्वारा दिया गया है।)

35. इसके अतिरिक्त, जब दिनांकित 03.09.2010 के आदेश में अनुपालन न करने का कोई परिणाम निर्धारित नहीं किया गया था, तब उसमें उल्लिखित अवधि केवल अपेक्षा थी, अनिवार्यता नहीं। हम यह भी टिप्पणी कर सकते हैं कि बहुत से अवसरों पर ऐसी समय-सीमा निर्धारित करने से न्याय के उद्देश्य की पूर्ति होने के बजाय अधिक जटिलताएं और हानि उत्पन्न होती हैं। ऐसी अवधि का निर्धारण केवल तभी उचित हो सकता है जब उसके लिए सशक्त एवं

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

बाध्यकारी कारण हों; और यदि ऐसी अवधि निर्धारित की भी जाती है, तो न केवल उसके निर्धारण के कारण, बल्कि अनुपालन न करने के परिणाम भी स्पष्ट रूप से निर्धारित किए जाने चाहिए, यदि किसी वैध कारण से उक्त अवधि का उल्लंघन प्रतिकूल परिणाम उत्पन्न करने वाला माना जाना हो।

36. उपर्युक्त विवेचना का सार यह है कि न्यायाधिकरण के दिनांकित 03.09.2010 के आदेश में उल्लिखित अपेक्षित समय-सीमा के बीत जाने मात्र से संबंधित कार्यवाही न तो समाप्त हुई और न ही उसे शून्य माना जा सकता था।

(जोर हमारे द्वारा दिया गया है।)

न्यायाधिकरण द्वारा 21.06.2013 को पारित उचित और सही आदेश में हाईन्यायालय के दखल देने का कोई कारण या औचित्य नहीं था; इस आदेश को ज़रूरी निर्देशों के साथ बहाल किया जाना चाहिए।

37. निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व यह कहना भी आवश्यक है कि उच्च न्यायालय ने दिनांकित 17.02.2011 का आदेश पारित करने वाले अनुशासनिक प्राधिकारी के विरुद्ध अनावश्यक प्रतिकूल टिप्पणियां की थीं। जैसा कि उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय की नाराजगी स्वयं इस गलत आधार पर आधारित थी कि कार्यवाही शून्य हो गई थी और समय-सीमा समाप्त होने के पश्चात अनुशासनिक प्राधिकारी को उस पर विचार करने का कोई अधिकार नहीं था। हमारा स्पष्ट मत है कि यदि उच्च न्यायालय इस आधार पर भी आगे बढ़ता कि कार्यवाही जारी नहीं रहनी चाहिए थी, तब भी अनुशासनिक प्राधिकारी के न्यायिक प्रक्रिया के प्रति अनादरपूर्ण होने की टिप्पणी करने का कोई औचित्य नहीं था। किसी भी स्थिति में, जब विवादित आदेश अनुमोदित नहीं किया जा रहा है, तब ऐसी टिप्पणियां/प्रतिकूल टिप्पणियां भी निरस्त मानी जाएंगी।

22. अब जांच में प्रक्रियात्मक त्रुटियों के संबंध में न्यायाधिकरण द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष से संबंधित द्वितीय प्रश्न पर आते हुए, हमारा मत है कि इस संबंध में विधि माननीय उच्चतम न्यायालय के अनेक निर्णयों द्वारा भली-भांति स्थापित है।

23. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **चेयरमैन, लाइफ इंश्योरेंस कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम ए. मसिलामणि, (2013) 6 एससीसी 530** में यह अभिनिर्धारित किया कि जब कोई न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण किसी अनुशासनात्मक कार्यवाही में अधिरोपित दंडादेश को तकनीकी आधारों पर निरस्त करता है, तो ऐसी स्थिति में न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण को अनुशासनिक

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्राधिकारी को उस चरण से पुनः कार्यवाही पूर्ण करने का अवसर प्रदान करना चाहिए, जिस चरण पर अनुशासनात्मक कार्यवाही दूषित हुई थी। उक्त निर्णय के पैरा 15 से 19 निम्नवत् हैं :

15. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा उठाए गए प्रश्नों के आलोक में हमारे विचारार्थ निम्नलिखित प्रश्न उत्पन्न होते हैं :

15.1. जब कोई न्यायालय/न्यायाधिकरण किसी अनुशासनात्मक कार्यवाही में अधिरोपित दंडादेश को तकनीकी आधारों, अर्थात वैधानिक प्रावधानों का पालन न किए जाने अथवा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के आधार पर निरस्त करता है, तो क्या उच्चतर न्यायालय को अनुशासनिक प्राधिकारी को उस बिंदु से कार्यवाही पुनः प्रारंभ कर उसे पूर्ण करने का अवसर देना चाहिए, जहां से अनुशासनात्मक कार्यवाही दूषित हुई थी?

15.2. यदि प्रथम प्रश्न का उत्तर यह है कि ऐसा नया अवसर दिया जाना चाहिए, तो क्या अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ करने अथवा उसे पूर्ण करने में हुए विलंब के आधार पर ऐसा अवसर देने से इनकार किया जा सकता है?

16. यह स्थापित विधिक सिद्धांत है कि जब न्यायालय इस आधार पर दंडादेश को निरस्त करता है कि जांच विधिवत् संचालित नहीं की गई थी, तो न्यायालय कर्मचारी को पुनःस्थापित नहीं कर सकता। उसे संबंधित प्रकरण को अनुशासनिक प्राधिकारी के पास वापस भेजना होगा ताकि वह उस बिंदु से जांच संचालित करे, जहां कार्यवाही दूषित हुई थी, और उसे पूर्ण करे। (ईसीआईएल बनाम बी. करुणाकर [(1993) 4 एससीसी 727 : 1993 एससीसी एल एंड एस 1184 : (1993) 25 एटीसी 704 : एआईआर 1994 एससी 1074], हिरणमयी भट्टाचार्य बनाम एस.एम. स्कूल फॉर गर्ल्स [(2002) 10 एससीसी 293 : 2003 एससीसी एल एंड एस 1033], उत्तर प्रदेश राज्य स्पिनिंग कंपनी लिमिटेड बनाम आर एस पांडे [(2005) 8 एससीसी 264 : 2006 एससीसी एल एंड एस 78] और यूनियन ऑफ़ इंडिया बनाम वाई एस साधु [(2008) 12 एससीसी 30 : (2009) 1 एससीसी एल एंड एस 126] देखें।)

17. यहां सम्मिलित दूसरा प्रश्न भी अब कोई अनिर्णीत प्रश्न नहीं है। अनुशासनिक प्राधिकारी को उस बिंदु से जांच पुनः पूर्ण करने का अवसर दिया जाना चाहिए अथवा नहीं, यह आरोपित कर्मचारी द्वारा किए गए कदाचार की गंभीरता पर निर्भर करता है। अतः न्यायालय को कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए कदाचार की प्रकृति एवं गंभीरता की जांच करनी चाहिए। इसी

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कारण न्यायालय/न्यायाधिकरण को कार्यवाही पूर्ण होने से पूर्व केवल उपर्युक्त आधारों पर आरोप-पत्र एवं संबंधित अनुशासनात्मक कार्यवाही को निरस्त करने की शक्ति नहीं है।

18. न्यायालय/न्यायाधिकरण को सामान्यतः अनुशासनात्मक जांच को केवल अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ करने में हुए विलंब के आधार पर निरस्त नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसी शक्ति न्यायिक पुनर्विलोकन की सीमाओं से परे है। यदि न्यायालय/न्यायाधिकरण ऐसी शक्ति का प्रयोग करता है, तो वह प्रारंभिक स्तर पर ही अपने न्यायिक पुनर्विलोकन के अधिकार से अधिक का प्रयोग करता है। अतः अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान जारी आरोप-पत्र अथवा कारण बताओ नोटिस को सामान्यतः न्यायालय द्वारा निरस्त नहीं किया जा सकता। यही सिद्धांत अनुशासनात्मक कार्यवाही के निष्कर्ष में हुए विलंब पर भी लागू होता है। संबंधित मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों की जांच करते समय लगाए गए आरोपों की गंभीरता/परिमाण को ध्यान में रखा जाना चाहिए। मूल बात यह है कि न्यायालय को सभी प्रासंगिक तथ्यों पर विचार कर उनका संतुलन एवं मूल्यांकन करना चाहिए, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या वास्तव में स्वच्छ एवं ईमानदार प्रशासन के हित में अनुशासनात्मक कार्यवाही को केवल उसके निष्कर्ष में हुए विलंब के आधार पर समाप्त किया जाना चाहिए। (देखें: उत्तर प्रदेश राज्य बनाम ब्रह्म दत्त शर्मा [(1987) 2 एससीसी 179 : (1987) 3 एटीसी 319 : एआईआर 1987 एससी 943], मध्य प्रदेश राज्य बनाम बानी सिंह [1990 एसयूपीपी एससीसी 738 : 1991 एससीसी एल एडं एस 638 : (1991) 16 एटीसी 514 : एआईआर 1990 एससी 1308], भारत संघ बनाम अशोक काकर [1995 एसयूपीपी (1) एससीसी 180 : 1995 एससीसी एल एडं एस 374 : (1995) 29 एटीसी 145], निषेध और आबकारी विभाग बनाम एल. श्रीनिवासन [(1996) 3 एससीसी 157 : 1996 एससीसी एल एडं एस 686 : (1996) 33 एटीसी 745], आंध्र प्रदेश राज्य बनाम एन. राधाकिशन [(1998) 4 एससीसी 154 : 1998 एससीसी एल एडं एस 1044 : एआईआर 1998 एससी 1833], एम.वी. बिजलानी बनाम भारत संघ [(2006) 5 एससीसी 88 : 2006 एससीसी एल एडं एस 919 : एआईआर 2006 एससी 3475], भारत संघ बनाम कुनिसेट्टी सत्यनारायण [(2006) 12 एससीसी 28 : (2007) 2 एससीसी एल एडं एस 304] और रक्षा मंत्रालय बनाम प्रभाष चंद्र मिर्धा [(2012) 11 एससीसी 565 : (2013) 1 एससीसी एल एडं एस 121 : एआईआर 2012 एससी 2250] ।)

19. "विचार करना" शब्द अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसका शब्दकोशीय अर्थ है–"विचार करना", "किसी रूप में स्वीकार करना" अथवा "मानना"। अतः इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है कि संबंधित

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विषय पर सक्रिय रूप से मनन एवं विचार किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, "विचार करना" शब्द किसी मामले के सभी प्रासंगिक पहलुओं पर विचार किए जाने की अपेक्षा करता है। अतः वैधानिक प्राधिकारी द्वारा राय का निर्माण अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के संदर्भ में गहन एवं सक्रिय मस्तिष्क-प्रयोग को प्रतिबिंबित करना चाहिए। प्राधिकारी के आदेश से स्वयं ऐसा मस्तिष्क-प्रयोग स्पष्ट होना चाहिए। अपीलीय प्राधिकारी केवल अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा प्रयुक्त भाषा को अपनाकर उसके आदेश की पुष्टि नहीं कर सकता। (इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम संतोष कुमार [(2006) 11 एससीसी 147 : (2007) 1 एससीसी एल एडं एस 388] और भिखुभाई विठ्ठलभाई पटेल बनाम गुजरात राज्य [(2008) 4 एससीसी 144 : एआईआर 2008 एससी 1771] देखें।)

24. इस स्तर पर यह जांचना भी उचित होगा कि अनुशासनात्मक कार्यवाही किस प्रकार संचालित की गई, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि कार्यवाही के किसी चरण पर कोई प्रक्रियात्मक त्रुटि हुई थी अथवा नहीं। अभिलेख से स्पष्ट होता है कि दिनांक 29.06.2021 के तीन आरोपों वाले आरोप-पत्र की तामील प्रत्यर्थी पर दिनांक 05.07.2021 को की गई। प्रत्यर्थी को दिनांक 20.07.2021 तक जांच अधिकारी के समक्ष आरोपों के संबंध में साक्ष्य सहित अपना प्रत्युत्तर प्रस्तुत करना था। दिनांक 19.07.2021 को प्रत्यर्थी जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ और उसने 19 पृष्ठों में अपना लिखित प्रत्युत्तर, अपने पक्ष के समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य सहित, प्रस्तुत किया। उसी दिन अर्थात दिनांक 19.07.2021 को व्यक्तिगत सुनवाई हेतु अगली तिथि 23.07.2021 नियत की गई। दिनांक 23.07.2021 को व्यक्तिगत सुनवाई के दौरान प्रत्यर्थी ने आरोप संख्या 1 एवं 2 के संबंध में कहा कि उसके लिखित प्रत्युत्तर में जो कुछ कहा जा चुका है, उसके अतिरिक्त उसे कुछ और प्रस्तुत नहीं करना है और वह कोई अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत अथवा पेश नहीं करना चाहता। उसने यह भी कहा कि वह किसी व्यक्ति से जिरह नहीं करना चाहता।

25. आरोप संख्या 3 के संबंध में प्रत्यर्थी ने प्रस्तुत किया कि अपने लिखित प्रत्युत्तर के अतिरिक्त उसका यह कहना है कि वाहन की गलती सुनिश्चित करने के पश्चात उसने प्रवर्तन मैनुअल के प्रावधानों के अनुसार आधे घंटे के भीतर इंटरसेप्शन जारी कर दिया था और वह अगली सुनवाई की तिथि पर मैनुअल की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करेगा। उसने आगे कहा कि आरोप संख्या 3 के संबंध में उसे और कुछ नहीं कहना है और वह कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करना चाहता। उसने आरोप संख्या 2 के संबंध में सी.डी. एवं पेन ड्राइव की प्रति उपलब्ध कराने का भी अनुरोध

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

किया। इसके पश्चात व्यक्तिगत सुनवाई हेतु अगली तिथि 02.08.2021 निर्धारित की गई और जांच अधिकारी द्वारा अपर आयुक्त, ग्रेड-II, वाणिज्यिक कर, कानपुर जोन-I, कानपुर को पत्र लिखकर प्रत्यर्थी को सी.डी. एवं पेन ड्राइव की प्रति उपलब्ध कराने का अनुरोध किया गया तथा उक्त पत्र की एक प्रति प्रत्यर्थी को भी सौंप दी गई।

26. अगली व्यक्तिगत सुनवाई की तिथि अर्थात 02.08.2021 को प्रत्यर्थी ने आरोप संख्या 3 के संबंध में एक पृष्ठ का अतिरिक्त लिखित प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया और सचल दस्ता से संबंधित मैनुअल के पृष्ठ संख्या 40 की छायाप्रति भी प्रस्तुत की। उस दिन उसने पुनः कहा कि वह आरोपों के संबंध में किसी व्यक्ति से जिरह नहीं करना चाहता और न ही कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है। उसने आगे कहा कि उसने उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक आचरण नियमावली के किसी नियम का उल्लंघन नहीं किया है और न ही उसने जानबूझकर कोई लापरवाही की है तथा उसने सदैव अत्यंत समर्पण के साथ अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया है।

27. इसके पश्चात जांच अधिकारी ने जांच कार्यवाही पूर्ण की और दिनांकित 28.09.2021 की जांच रिपोर्ट अनुशासनिक प्राधिकारी को प्रस्तुत की। अनुशासनिक प्राधिकारी ने प्रत्यर्थी को जांच रिपोर्ट की प्रति सहित दिनांक 29.10.2021 को कारण बताओ नोटिस जारी किया। प्रत्यर्थी ने तत्पश्चात दिनांक 18.11.2021 के पत्र द्वारा कारण बताओ नोटिस का अपना प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया। अनुशासनिक प्राधिकारी ने प्रस्तावित दंड के संबंध में उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग से अनुमोदन प्राप्त करने के पश्चात दिनांक 30.05.2022 को दंडादेश पारित किया।

28. दिनांकित 30.05.2022 के दंडादेश के मात्र अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने आरोपों के संबंध में जांच रिपोर्ट के अंशों को पुनरुत्पादित किया और जांच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्षों के आलोक में दंडादेश पारित कर दिया। दंडादेश में प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत दिनांक 18.11.2021 के कारण बताओ नोटिस के प्रत्युत्तर का कहीं कोई उल्लेख नहीं है। दिनांक 29.10.2021 के कारण बताओ नोटिस के प्रत्युत्तर में दिनांकित 18.11.2021 को प्रस्तुत प्रत्युत्तर पर दंडादेश पारित करने से पूर्व अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा बिल्कुल भी विचार नहीं किया गया। अतः उक्त कारण से दिनांकित 30.05.2022 का दंडादेश कायम नहीं रखा जा सकता।

29. उपर्युक्त विवेचना का निष्कर्ष यह है कि दिनांकित 30.05.2022 का दंडादेश इस कारण कायम नहीं रखा जा सकता कि कारण बताओ नोटिस के प्रत्युत्तर में प्रत्यर्थी द्वारा दिनांक 18.11.2021 को प्रस्तुत प्रत्युत्तर पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया गया और इस कारण यह कहा

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जा सकता है कि दिनांकित 30.05.2022 को दंडादेश पारित किए जाने के चरण पर अनुशासनात्मक कार्यवाही दूषित हो गई थी। साथ ही, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि न्यायाधिकरण द्वारा दिया गया यह तर्क कि रिट न्यायालय द्वारा दिनांकित 29.09.2021 को पारित निर्णय एवं आदेश में सक्षम प्राधिकारी को अनुशासनात्मक कार्यवाही दो माह के भीतर पूर्ण करने का निर्देश दिए जाने के कारण उसके पश्चात अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी नहीं रखी जा सकती थी, विधिसम्मत नहीं है, जैसा कि हम उपर्युक्त आरोप संख्या 1 का निर्णय करते समय पहले ही अभिनिर्धारित कर चुके हैं।

30. उपर्युक्त विवेचना के दृष्टिगत रिट याचिका आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है और राज्य लोक सेवा न्यायाधिकरण, लखनऊ द्वारा दावा याचिका संख्या 1708 वर्ष 2022, "अंशुल जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य", में दिनांकित 18.04.2023 को पारित निर्णय एवं आदेश को इस सीमा तक संशोधित किया जाता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी को यह स्वतंत्रता प्रदान की जाती है कि वह दिनांकित 29.10.2021 को जारी कारण बताओ नोटिस के प्रत्युत्तर में प्रत्यर्थी द्वारा दिनांकित 18.11.2021 को प्रस्तुत प्रत्युत्तर पर विचार करने के पश्चात नया दंडादेश पारित करे। उपर्युक्त कार्यवाही आज से तीन माह की अवधि के भीतर पूर्ण की जाएगी।

31. वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

10 मार्च, 2026

महेश

(न्यायमूर्ति अमिताभ कुमार राय) (न्यायमूर्ति श्रीमती संगीता चंद्रा)

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय. का मूल संस्करण ही मान्य होगा।